International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070
www.socialresearchjournals.com
Volume 2; Issue 1; January 2016; Page No. 45-48

भारतीय शिक्षा–दर्शन में रवीन्द्रनाथ टैगोर का योगदान

डॉ. प्रज्ञा अग्रवाल

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दू कालेज ऑफ एजुकेशन, सोनीपत

शोध–आलेख सार

टैगोर अत्यधिक सार्वभौमिक, विचारशील तथा पूर्ण व्यक्ति थे। उनकी विचारधारा ने विश्व को अनुप्राणित किया और अन्तर्राष्ट्रीय जगत में तो उनका योगदान अविस्मरणीय ही है। रवीन्द्रनाथ टैगोर मनुष्य को परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ कृति मानते थे। उनका मंतव्य था कि राष्ट्रीयता के कारण विश्व–प्रेम विकसित नहीं हो पाता है, उन्होंने ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' का समर्थन किया और भारत तथा विश्व की समस्याओं के समाधान के लिए उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीवाद की धारणा को प्रतिपादित किया। इसका प्रयोजन पूर्व तथा पाश्चात्य के संगम के अध्ययन के संयुक्त समागम में सत्य की अनुभूति करना तथा दो गोलार्द्धो के मध्य विचारों स्वतन्त्र आदान–प्रदान के द्वारा विश्व शान्ति की मूल संभावनाओं को सशक्त करना है। टैगोर की विचारधारा में आदर्शवाद स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होता है। इनके अनुसार शिक्षा व्यक्ति का शारीरिक, बौद्विक, नैतिक और आत्यात्मिक विकास वैयाक्तिक एवं सामाजिक दृश्टिकोण से है।

मुख्य–शब्दः– भौतिक एवं आध्यात्मिक, सामाजिक जीवन, एक अद्भुत आत्मा, विचारवान, जन्मजात अत्याचारी।

विश्व के क्षितिज पटल पर ऐसी महान विभूतियां उदित होती हैं जिनकी रचना इतिहास करता है और कुछ ऐसी होती है जो स्वयं इतिहास रचती हैं। ऐसी ही महान विभूतियों में गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का नाम अग्रणीय है। इन्होनें इतिहास की रचना स्वयं की है। इन्होंने अपनी महान सामाजिक आँखों से भारत का भविष्य देखा था। शिक्षा की राष्ट्ररूपी इमारत की बुनियाद है जिस पर राष्ट्र के चतुर्मुखी विकास का प्रसाद खड़ा किया जा सकता है। शिक्षा ही किसी समाज और राष्ट्र की भौतिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियाँ हासिल करने में दिशा निर्देष करती है। शिक्षा किसी समाज अथवा राष्ट्र की आकांक्षाओं की पूर्ति में उसकी सहायता करती है। 'भू–भाग' राष्ट्र का शरीर और 'व्यक्ति' उसके प्राण होते है। व्यक्तियों की श्रेष्ठता और हीनता – राष्ट्र के उत्थान और पतन का कारण होती हैं। मैकाइवर ने ठीक ही लिखा है कि– ''राष्ट्र का गुण, उसकी सामाजिक इकाइयों का गुण है, अर्थात् सामाजिक इकाइयों का सामूहिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन है। यदि ईंधन ही खराब है तो ज्योति कैसे तेज हो सकती है– अर्थात् यदि सामाजिक इकाई निर्बल हैं, तो राष्ट्र कैसे दैदीप्यमान हो सकता है? इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्र और उसके निवासियों का एक दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध है। राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है, जब नागरिक श्रेष्ठ हों। उनको ऐसा बनाना ही राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य हो। किसी भी राष्ट्र में शिक्षा मानवीय और सामाजिक जीवन में जो कार्य करती है उससे वह राष्ट्र प्रभावित होता है। प्रत्येक नागरिक राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। इस प्रकार शिक्षा मानव और सामाजिक जीवन में जो कार्य करती है उससे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष, दोनों रूपों में राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। इस प्रकार शिक्षा मानव और सामाजिक जीवन में जो कार्य करती है उससे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष, दोनों रूपों में राष्ट्र प्रभावित होता है।

गुरूदेव के उदय के साथ भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का बिगुल बज चुका था, अन्धविश्वास और अंग्रेजी दासता का बोलबाला था, और सामाजिक व्यवस्था अपनी पराकाश्ठा पर थी। ऐसे समय में गुरूदेव ने अपने चिन्तन द्वारा सम्पूर्ण जगत को मानवता का पाठ पढ़ाया । इन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा राष्ट्र की संकुचित सीमा को लांघकर एक विश्वदृष्टि अपनायी। इन्होंने विश्वबन्धुत्व का सन्देश दिया और विश्व को अपनी तरफ आकृश्ट कर श्रद्वा एवं सम्मान का पात्र बनाया। इनका बन्धुत्व का पाठ संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से निहित है।

ऐसे महामानव जो हमारे बीच आज नहीं हैं फिर भी अपने चिन्तनों एवं कृतियों द्वारा आज भी हमारा मार्गदर्शन कर रहे है और करते रहेंगे। इनका न केवल भारत वरन् सम्पूर्ण विश्व किसी न किसी रूप में सदैव ऋणी रहेगा। राधाकृष्ण ने लिखा है कि, ''रवीन्द्रनाथ जी आधुनिक भारत के नव जागरण के सबसे बड़े व्यक्ति थे। कई पिढ़ियों से हमें उनके जैसा कवि नहीं मिला। वह एक बड़े पैगम्बर, समुपदेश्टा तथा भावी भाग्य के पथ–प्रदर्शक थे। उनकी शोध छात्रा, शिक्षाशास्त्र विभाग, डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय फैजाबाद (उ0 प्र0)

उपाचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, राजा मोहन गर्ल्स (पी0जी0) कालेज फैजाबाद (उ0प्र0)

भारतीय शिक्षा–दर्शन में रवीन्द्रनाथ टैगोर का योगदान

रचनाओं के कारण ही भारत के बाहर के देशों के लाखों मनुष्य हमारे देश और उनकी संस्कृति का आदर करते थे। उन्होंने हमारे देश में जन्म लिया, इसका अर्थ होता है कि ईश्वर हमसे निराश नहीं है।''

गुरूदेव एक रहस्यवादी एवम् कवि हृदय व्यक्ति थे। रवीन्द्रनाथ प्रतिभा के मूर्तरूप थे। इन्होंने अपनी लेखनी से साहित्य के विभिन्न अंगो की पृश्टि की और नवीन रचनाओं से साहित्य–कोश को सम्पन्न बनाया। काव्य, नाटक, कहानी, आलोचक, बाल साहित्य और चित्रकला आदि सभी विषयों पर रचनाएं की और इन सभी क्षेत्रों में उन्हें अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई। अपने जीवन के अन्त तक कवि कर्म में व्यस्त रहे। 'संध्या संगीत', 'प्रभात संगीत', 'प्रकृति प्रतिशोध', 'कल्पना', 'सिन्धु', आदि रवीन्द्र जी के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। 70 साल की अवस्था में उन्होंने चित्रकला की ओर रूचि प्रदर्शित की। इनके बनाये अनेक चित्र हैं, जिससे इनकी कला कुशलता का परिचय मिलता है।

आधुनिक भारत के निर्मताओं में रवीन्द्रनाथ टैगोर का महत्वपूर्ण स्थान है। इनके अनेकानेक योगदान भी अपनी अलग विशेषता रखते हैं। आध्यात्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में तो मुख्य रूप से देन है ही, पर वे उन्हीं तक सीमित नहीं है। एक रचनात्मक साहित्यकार के रूप में उनका योगदान इतना सुखीदित है कि उसके विस्तार से उल्लेख

करने की आवश्यकता नहीं है। वस्तुतः वे एक संवेदनशील मानववादी स्वतन्त्रता एवं व्यक्ति की गरिमा उनके चिन्तन के महत्त्वपूर्ण आयाम है।

टैगोर युग–दृश्टा एवं पुरुष थे। भारत के ही नहीं, प्रत्युत् विश्व के प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने विश्व में भारत के मस्तक को ऊँचा स्थान दिलाया। उनका विराट था– एक साथ ही कवि, नाटककार, कथाकार, उपन्यासकार, शिक्षाविद् और महान मानवतावादी के रुप में इतिहास द्वारा वे सदा समादृत रहेंगे। महात्मा गांधी ने रवीन्द्रनाथ टैगोर को 'महान संस्कृति रक्षक' कहा था। 'काउन्ट की सरलिंग' ने लिखा है कि 'टैगोर अत्यधिक सार्वभौमिक, विचारशील तथा पूर्ण व्यक्ति थे। उनकी विचारधारा ने विश्व को अनुप्राणित किया और अन्तर्राष्ट्रीय जगत में तो उनका योगदान अविस्मरणीय ही है।''

आदर के साथ उन्हें गुरुदेव के नाम से पुकारा जाता है। वे जन्मना और कर्मणा के महान विभूति थे। स्वस्थ, निर्मलकाया, उच्चललाट ऋषियों की भाँति अविरल और सुदीर्घ दाढ़ियां उनके व्यक्तित्व पर वंशानुगत एवं तत्कालीन दशाओं के प्रभाव पड़े थे।

वे एक राजनीतिज्ञ तो नहीं थे लेकिन समय–समय पर उनका सवेंदनशील ह्रदय देश की गम्भीर राजनैतिक घटनाओं पर अपनी प्रतिक्रिया दिखाये बिना रह सकता था। इसी कारण टैगोर जी ने 1905 ई0 में बंगाल विभाजन का विरोध किया। 1905 ई0 के बंगभंग विरोधी आन्दोलन में गहराई से भाग लिया सन् 1919 ई0 में जलियावाला बाग के नरसंहार 'सिर की उपाधि लौटा दी। उनके सामाजिक विचार उनके मानवतावाद की सहज अभिव्यक्ति है।

टैगोर मूलतः आध्यात्मिक धरातल से जुड़े थे यही कारण है कि वे नैतिकता युक्त (अर्थात् धर्मयुक्त) राजनैतिक के पक्ष में थे। ऐसी नैतिकता को जो विवेकसम्मत हो। उनके लिए धर्म की अवधारणा उच्च मानवीय मूल्यों से जुड़ी थी। इस टैगोर बिना धर्म की राजनीति की कल्पना नहीं करते हैं।

स्मरणीय हैं कि गुरू रवीन्द्रनाथ टैगोर न तो राजनीतिक थे और नहीं राजनीतिक दर्शन। वे एक देशभक्त और मानवता के प्रेमी थे। उन्हें पराधीनता से कष्ट था। चूँकि वे व्यक्ति के गौरव को विशेष महत्व देते थे। अतः आत्मनिर्भरता एवं स्वावलम्बन का संदेश उन्होंने दिया।

टैगोर नारी को पुरूषों के बराबर स्थान दिलाने की कामना करते थे। उन्होंने शान्तिनिकेतन में विश्व भारती की स्थापना करते समय बालकों के साथ–साथ बालिकाओं की भी सह शिक्षा का प्रबन्ध किया।

टैगोर के अनुसार मानव आत्मा स्वायत्त है यह स्वायत्तता को पुनः प्राप्त किया जा सकता है।

टैगोर की स्वतन्त्रता सम्बन्धी अवधारणा राजनीतिक चिन्तन की अमूल्य देन कही जाती है गुरूदेव मानव प्रकृतिगत, विकास के समर्थक थे। इसलिए आत्मिक स्वतन्त्रता पर उन्होंने बल दिया।

टैगोर मानवधिकारों के प्रबल समर्थक थे। वे प्राकृतिक अधिकारों के समर्थक थे, और व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारों में राज्य के हस्तक्षेप को वे अनुचित ठहराते थे। उनका कहना था कि मनुष्य को दूसरे व्यक्तियों के साथ आत्मीय एकता का अनुभव करना चाहिए। इससे अधिकारों का संघर्श मिट जाता है।

टैगोर का राज्य तथा इसकी संस्थाओं में घोर अविश्वास था, टैगोर इसके प्रभाव को परिसीमित किये जाने के समर्थक थे। इस प्रकार वे कल्याणकारी राज्य के भी आलोचक थे। टैगोर मानते थे कि राज्य को जनमानस को शक्ति एवं प्रेरणा देनी चाहिए, परन्तु इसे अपने ऊपर उन कार्यों को नहीं लेना चाहिए जिन्हें करने का उत्तरदायित्व जनमानस का है। टैगोर ने भारत के दर्शन गांवों में किये थे। उन्होंने देखा कि सच्चा भारत तो गाँवों में बसता है। पर वहाँ गरीबी, अशिक्षा, अज्ञान, बीमारी आदि फैली है। टैगोर इसे देखकर रो दिये। उन्होंने ग्राम सुधार का बीड़ा उठाया। जगह–जगह जाकर उन्होंने ग्राम सुधार की बात कही।

रवीन्द्रनाथ टैगोर मनुष्य को परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ कृति मानते थे। उन्होंने कलकत्ता विश्वविज्ञालय एक व्याख्यान माला के अन्तर्गत कहा था ''मनुष्य का दायित्व महामानव का दायित्व है जिसकी कहीं सीमा नहीं है। जन्तुओं का वास भू–मंडल पर है, मनुष्य का वास वहां है जिसे देश कहते हैं और यह देश केवल भौमिक नहीं अपितु मानसिक है। मनुष्य –मनुष्य के मिलने से यह देश बनता है यह मिलन ज्ञान एवं कर्म में है।

यद्यपि रवीन्द्रनाथ टैगोर वर्णाश्रय धर्म के समर्थक थे, किन्तु उन्होंने ऊँच–नीच और छुआ–छूत को कभी स्वीकार नहीं किया उनकी यह पक्की धारणा थी कि वर्णाश्रय धर्म हिन्दुओं का आर्दश समाज धर्म है किन्तु जाति भेद को वे एक विकृत मानते थे। टैगोर की दृष्टि विश्व–एकता की अनुभूति से अनुप्राणित था। उनका मंतव्य था कि राष्ट्रीयता के कारण विश्व–प्रेम विकसित नहीं हो पाता है, उन्होंने ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' का समर्थन किया और भारत तथा विश्व की समस्याओं के समाधान के लिए उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीवाद की धारणा को प्रतिपादित किया। वे समूचे विश्व को राष्ट्र की डोर में बाँधना चाहते थे।

स्मरणीय है कि गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर मानवतावाद के पुरोधा एवं प्रवक्ता थे। वे पूर्व तथा पश्चिम का संगम चाहते थे। 1921 ई0 में उनके द्वारा विश्वभारती की स्थापना का यही प्रयोजन था। उन्होंने कहा था कि इसका प्रयोजन पूर्व तथा पाश्चात्य के संगम के अध्ययन के संयुक्त समागम में सत्य की अनुभूति करना तथा दो गोलार्द्धो के मध्य विचारों स्वतन्त्र आदान–प्रदान के द्वारा विश्व शान्ति की मूल संभावनाओं को सशक्त करना है।

शिक्षा सम्बन्धी अवधारणाः– रवीन्द्रनाथ टैगोर का कथन था कि, ''शिक्षा का सम्पर्क हमारे जीवन आर्थिक, बौद्विक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक जीवन मे होना चाहिए।'' वे एक सन्त एवं महान् कर्मयोगी थे। वे शिक्षा को साधन मानते थे। विद्या के आलोक से वे विशिष्ट रूप से आलोकित हुए। वे शिक्षा के माध्यम से आत्मनिर्भर एवं आध्यात्मिक रूप से सुव्यवस्थित व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहते थे। वे शिक्षा के द्वारा अविद्या समाप्त करना चाहते थे। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि जो आम आदमी के कल्याण से जुड़ी हो और समाज की उन्नति की आधारशिला हो। वे नहीं चाहते थे कि शिक्षा में राजनीति का प्रवेश हो उनका मन्तव्य था कि ''व्यक्ति की सच्ची मुक्ति अविद्या या अज्ञान से मुक्ति है।'' शिक्षा एक व्यक्ति को सुसंस्कृति नागरिक बनाती है और उसमें राष्ट्रीय उत्तरदायित्व की भावना जागृत करती है। वर्तमान स्कूली शिक्षा उच्च लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनुपयुक्त है, ऐसी उनकी मान्यता थी। यह प्रणाली सुनागरिक तैयार करने में असमर्थ है उनके मन में धन के प्रति मोह है।

शिक्षा के माध्यम के सन्दर्भ में उनका विचार था कि विचारों के आदान– प्रदान की ऐसी व्यवस्था य पद्वति होनी चाहिए, जिसमें बच्चे को अधिक प्रयास करने की आवश्यकता न हो, साथ संप्रेशण को शिक्षार्थी ग्रहण कर सके और इस कार्य को मातृभाषा आसानी से कर सकती है। टैगोर अंग्रेजी को इसका विकल्प नहीं मानते थे। अंग्रेजी शिक्षा को वे अनुचित एवं अपर्याप्त मानते थे। उनका कहना था कि मातृभाषा में सम्प्रेशणीयता की शक्ति अधिक होती है। विश्वविद्यालय शिक्षा को वे दोशपूर्ण एवं प्रयोजन में असफल मानते थे। उनका विचार था कि विद्यार्थियों को भारतीय इतिहास, दर्शन, साहित्य एवं धर्म की शिक्षा दी जानी चाहिए और भारतीयता का विशेष रूप से संम्प्रेशण होना चाहिए। ललित कला को वे सभ्यता का अंग मानते थे। संगीत को राष्ट्रीय अभिव्यक्ति का सर्वोच्च अंग माना है। शिक्षा का आधार आर्थिक होना चाहिए।

टैगोर का स्वभाव सामाजिक दर्शन उनके सुसंस्कृत परिवार बुद्वि, उपनिषद की शिक्षाओं एवं राजा राममोहन राय के विचारों से प्रभावित था। साथ ही पाष्चात्य लेखकों एवं कवियों की कृतियों का भी उस पर प्रभाव है। टैगोर की अवधारणा थी कि ईश्वर पृथ्वी पर कठोर कर्म करने वालों, पत्थर तोड़ने वाले श्रमिकों के हृदय में वास करता है। मोक्ष के सन्दर्भ में उनकी मान्यता थी कि मोक्ष जैसी कोई वस्तु नहीं है क्योंकि ईश्वर ने हमारा सृजन किया है और सदैव हमारे साथ आबद्व है।

टैगोर भारत के सांस्कृतिक पुनरूत्थान के अग्रदूत थे। राधाकृष्ण के शब्दों में, ''रवीन्द्रनाथ आधुनिक भारत के नव–जागरण के सबसे बड़े व्यक्ति थे। कई पीढ़ियों से हमें उनके जैसा कवि नहीं मिला वह एक बड़े पैगम्बर, समपुदेश्टा तथा हमारी भावी भाग्य के पथ–प्रदर्शक थे। उन्होंने हमारे देश में जन्म लिया, इसका अर्थ है कि ईश्वर हमसे निराश नहीं है।

टैगोर की विचारधारा में आदर्शवाद स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होता है। इनके अनुसार शिक्षा व्यक्ति का शारीरिक, बौद्विक, नैतिक और आत्यात्मिक विकास वैयाक्तिक एवं सामाजिक दृश्टिकोण से है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'पर्सनालिटी' में लिखा है कि, ''उच्चतम शिक्षा वह है जो हमारे जीवन को सभी अस्तित्वों के साथ संगतिपूर्ण बनाती है।'' टैगोर भारतीय आदर्श को भी लिया जिसमें 'सा विद्या या विमुक्तये' है। इस कथन का तात्पर्य यह लगाया है कि शिक्षा का अर्थ केवल आध्यात्मिक ज्ञान से नहीं है, न तो मुक्ति का अर्थ मुक्ति की बात से है। ज्ञान के अन्तर्गत मानव जाति के हित के लिए काम आने वाले सभी ज्ञान और प्रशिक्षण है, तथा मुक्ति का अर्थ वर्तमान जीवन में सभी प्रकार की दासता से मुक्ति है। ऐसी दासता आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं मानसिक हो सकती हैं, इनसे मुक्ति ही वास्तविक शिक्षा है। भौतिक दृष्टि से गुरूदेव ने शिक्षा को इस प्रकार परिभाषित किया है–''वास्तविक जीवन की रक्षा करने में सहायता करती है।

निश्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन को विकसित करना शिक्षा है, यह वह साधन है जिसके द्वारा पूर्ण मानव के रूप व्यक्ति विकसित होता है, जिसके द्वारा व्यक्ति प्राणिमात्र से प्रेम करना सीखता है और विश्व बन्धुत्व स्थापित करता है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य

टैगोर ने शिक्षा के कई उद्देश्य बताये हैं जिससे व्यक्तित्व के विभिन्न अंगों के विकास का सम्बन्ध है। इस प्रकार सब पहलुओं से उद्देश्यों को निश्चित किया है।

1. शारीरिक विकास का उद्देश्यः– उनका विचार है कि सबसे पहले प्रत्येक बालक का शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए और खेद प्रकट किया था कि, ''पर्याप्त खेल और व्यायाम तथा भोजन के न होने से बंगाली बालक का शरीर अधपोशित रहता है और उसका मस्तिष्क अविकासति रहता है।'' इसलिए उन्होनें प्रकृति की गोद में खेलने–कूदने, तालाब में नहाने, फूल चुनने, पेड़ पर चढ़ने तथा इन क्रियाओं में आन्नद प्राप्त करने के लिए बच्चों को स्वतन्त्र अवसर देने के लिए कहा है साथ ही साथ उन्हें उचित भोजन भी दिया जाये।

2. बौद्विक विकास का उद्देश्यः– बौद्विक विकास में विचार, चिन्तन, तर्क, स्मरण, कल्पना, बुद्वि आदि मानसिक शक्ति को व्यवहार में लाने की क्षमता भी बालकों को देनी चाहिए तभी उसका मानसिक विकास सही ढंग से बुद्वि एवं प्रज्ञा का प्रयोग किया जाता है।

3. नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास का उद्देश्यः– टैगोर कवि एवं दृश्टा के रूप में नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास को विश्व व्यापक आधार पर प्राप्त करने के लिए जोर देते है। नैतिकता के लिए उन्होंनें ब्रह्मचर्य, अनुशासन, शान्तवास, ध्यान एवं साधना को आवश्यक बताया।

4. व्यावसायिक विकास का उद्देश्यः– टैगोर ने 'स्वाधीन शिक्षा' लेख में उन्होंने प्रकट किया है कि शुरू से ही लोगों को इस प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाय कि वे अच्छी तरह जान जायें कि जन–कल्याण क्या है तथा वे सभी दृष्टियों से अपनी आजीविका कमाने के व्यवहारतः योग्य हो जायें।

5. व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास का उद्देश्यः– टैगोर का विचार है कि व्यक्तिगत विकास का उद्देश्य पहले होना चाहिए और बाद में वह समाजगत विकास में बदल दिया जायें। टैगोर ने लिखा है कि, ''जब तक मैं अपने आप को स्वतन्त्र न कर लूँ, तब तक मैं किसी दूसरे को स्वतन्त्र नहीं कर सकूँगा।''

6. सांस्कृतिक विकास का उद्देश्यः– टैगोर पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान को अपनी संस्कृति में आत्मसात् कराना चाहते थे। वे केवल भौतिक समृद्वि एवं पाश्चात्य संस्कृतिक के अन्धानुकरण के विरोधी थे। वे आध्यात्मिक एवं नैतिकता के सामंजस्य से भौतिक संस्कृतिक की समृद्वि चाहते थे।

पााठ्यक्रमः– पाठ्क्रम में भाषा और साहित्य, मातृभाषा, अंग्रेजी, अन्य भाषाएं–देशी–विदेशी, ग्रीक, लैटिन, फ्रेंच, जर्मन, चीनी, जापानी, रूसी, अरबी, फारसी, संस्कृत, उर्दू, गणित, विज्ञान, रसायन, भौतिक, जीव–जन्तु, प्रकृति अध्ययन, स्वास्थ्य रक्षा, इतिहास (देशी एवं विश्व) राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, भूगोल, भूर्गशास्त्र, कलां, संगीत, नृत्य, कृषि एवं टेक्निकल विषय, दर्शनव धर्म, मनोविज्ञान तथा उपयोगी क्रियाएं जैसे– अभिनय, भ्रमण, बागवानी, प्रादेशिक अध्ययन, प्रयोगशाला कार्य, चित्रण, रचना प्रदर्शिनी संग्रह, खेल–कूद, व्ययाम, धार्मिक क्रियाएं, आत्मानुशासन, नाटक, संगीत नृत्य आदि सम्मिलित किये है।

शिक्षण विधिः– गुरूदेव ने शिक्षण की प्राचीन और तत्कालीन विधियों को कई रूपों में प्रयेाग किया है। क्रिया विधि, मौखिक विधि, स्वास्थ्य विधि, प्रयोग विधि, तर्क एवं वाद विधि, साधारण सामग्री द्वारा शिक्षण विधि, गुरू–शिष्य की शिक्षा विधि के द्वारा शिक्षा देने पर विशेष बल दिया।

स्त्री शिक्षाः– स्त्री शिक्षा को उन्होंने केवल व्यक्तिक महत्व की दृश्टि से नहीं देखा बल्कि सामाजिक दृश्टि से देखा है। शान्ति निकेतन में स्त्री शिक्षा विभाग सन् 1908 में आरम्भ हुआ लेकिन बाधाओं के उपस्थित होने से कुछ काल के लिए बन्द कर दिया गया। पुनः सन् 1922 में 'नारी भवन' के नाम से आरम्भ किया गया, बाद में इसे 'नारी विभाग' कहा गया। जहाँ पर स्त्रियों को पुरूषों के समान और साथ ही शास्त्रीय विषय के अतिरिक्त गृह विज्ञान, पाक कला, सिलाई–कला, सिलाई–कढ़ाई, कला–कौशल, आत्म–रक्षा की शिक्षा, समाज सेवा इत्यादि कार्यों की उपयुक्त सुविधाएं है।

विद्यालयः–टैगोर के विचार से विद्यालय प्राचीन गुरू आश्रमों की भाँती नगर के कोलाहल से दूर प्रकृति की सुरम्य गोद में स्थित होना चाहिए। इनका विश्वास था कि शान्त पर्यावरण में ही शिक्षक और शिक्षार्थी शिक्षा की साधना कर सकते है। इनमें राष्ट्र की सभ्यता एवं संस्कृति की सही शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए। इसके साथ–साथ इनमें अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की भाषा एवं संस्कृतियों की शिक्षा व्यवस्था भी होनी चाहिए, जिससे विद्यार्थी विश्वबोध कर सकें।

शिक्षकः– टैगोर के अनुसार अध्यापक को स्वयं ब्रह्मचारी, स्वार्थरहित, एकान्तवासी, सभी ज्ञान से पूर्ण, 'एक अद्भुत आत्मा', विचारवान् प्रकृति में तथा मनुष्य में महान एवं सुन्दर को परखने, जानने वाला हो जिन्हें वह अपने छात्रों को बड़े उत्साह के साथ प्रदान भी करें। अध्यापक को नम्र होना चाहिए। कठोर अध्यापकों को टैगोर ने 'जेल वार्डन, 'ड्रिल–सार्जेन्ट', 'जन्मजात अत्याचारी', 'शक्ति के भोगी' आदि कहा है।

शिक्षार्थीः– टैगोर का विचार है कि सर्वप्रथम उसे सादा और प्रकृति जीवन से मुक्त होना चाहिए जिससे उसका शारीरिक एवं मानसिक विकास स्वाभाविक ढंग से हो उसमें कृत्रिमता न आने पाये। विद्यार्थियों के लिए आवश्यक गुण–व्यवहार में विनम्रताए नियमों एवं आज्ञाओं का पालन, उच्चभिलाषा, स्वतन्त्र विचार, भक्ति, तपस्या, साधना, आत्मानुभूति, व्यक्ति एवं सामाजिक जीवन में अनुशासन, निन्दनीय असभ्य एवं दोषपूर्ण बातों से दूर रहना इत्यादि जैसे गुण होना चाहिए।

रवीन्द्रनाथ टैगोर का शान्तिनिकेतन तथा विश्व भारतीः– शान्ति निकेतन कलकत्ते से दूर उतर–पश्चिम की ओर लगभग सौ मील दूर है। शान्तिनिकेतन की स्थापना गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ने की थी। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने सन् 1901 ई0 में शान्ति निकेतन विद्यापीठ की स्थापना की। टैगोर का ध्यान उच्चशिक्षा की ओर गया। उच्चा शिक्षा को ही वे आध्यात्मिक उन्नति का साधन मानते थे। विश्वविद्यालय की यांत्रिकता से उन्हें ग्लानिक थी। वे विश्वविद्यालय को ज्ञान का केन्द्र बनाना चाहते थे। अतः उन्होनें निम्नलिखित तीन उद्देश्य रखें–

1. पूर्व ओर पश्चिम की भिन्न संस्कृतियों को उनकी मौलिक एकता के आधार पर निकट लाना।
2. इसी एकता के आधार पर पश्चिम के विज्ञान और संकृति के निकट पहुँचाना।
3. गाँवों के जीवन में सुख–समृद्धि लोने के लिए ग्रामीण पुनर्रचना के संस्थान की स्थापना करना।

विश्व–भारती के अन्गर्तत आने वाली प्रमुख संस्थाएं निम्नलिखित हैं– पाठ भवन, शिक्षा भवन, विद्या भवन, विनय भवन, श्री निकेतन, शिल्प सदन–शिल्प भवन, हिन्दी भवन, कला भवन, संगीत भवन, चीन भवन, श्री सदन तथ इसके अलावा धर्म एवं दर्शन के अध्ययन एवं शोध की व्यवस्था है।

गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर जी का भारतीय शिक्षा दर्शन में योगदान अपनी आने वाली पीढ़ी को मार्ग–दर्शित करते रहेंगे। उनके शैक्षिक विचार आज भी औचित्यापूर्ण एवं प्रासंगिक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रवीन्द्र दर्शन, कृष्ण राधा
2. टैगोर वर्क्स, विश्व–भारती संस्करण खण्ड–13
3. रवीन्द्र जीवनी, प्रभात कुमार मुखेपाध्याय
4. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महेश्वरी मिश्र
5. भारतीय शिक्षा दार्शनिक, कीर्ति देवी सेठ
6. भारत के महान शिक्षाशास्त्री, डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव
7. भारतीय सामाजिक चिन्तर, प्रो0 पी0 सी0 जैन तथा नरेन्द्र कुमार
8. Gitanjali, The Indian Society, Londan, 1912
9. Sadhana, Macmillan, London, 1913
10. Stray Birds, Madcmillan, London, 1916